काश्मीरशैवदर्शन में सिद्धसोमानन्द की शिवदृष्टि में शिवशक्तिप्रमातृसन्दर्शन

Tej Prakash*

Research Scholar, Department of Sanskrit, Delhi University, Delhi – 110007

सारांश - भारतीय दर्शन परम्परा में शैवदर्शन की अद्वयपरम्परा परमशिव का सर्वत्र प्रतिपादन करती है। काश्मीरशैवदर्शन की शाखा को परमविद्वान् माहेश्वर सिद्ध सोमानन्द ने संरक्षित किया है। परवर्ती काल में इसी परम्परा को अभिनव गुप्त, क्षेमराज जी आदि ने पोषित कर संवर्धित किया है। इनका शिवदृष्टि नामक ग्रन्थ काश्मीर शैवदर्शन के ग्रन्थों में उपलब्ध प्रथम ग्रन्थ है, जो कि प्रकरण ग्रन्थ के रूप में विख्यात है। इस ग्रन्थ का वैशिष्ट्य है कि आचार्य ने तात्कालिक स्थिति तक सुख्यात सभी दर्शन के सम्प्रदायों का खण्डन कर "स्वमत सर्वं शिवात्मकम्" का मण्डन किया है। इसके साथ ही यह ग्रन्थ न्याय की शैली से लिखा गया है। शिवदृष्टि के अध्ययन से ज्ञात होता है कि शक्ति परमशिव से भिन्न नहीं है। परमशिव ही अपनी शक्ति से सृष्टि कर उसमें व्याप्त स्वयं को व्याप्त कर स्थित है।

---------------------------------X---------------------------------

शैवदर्शन

जब विश्व के किसी एक विशेष त्रिकालातीत परम सत्य तत्त्व की पहचान और उसको जानने के लिए जिस पथ की शरण ली जाती है, तब सामान्य से विशेष की ओर जाने वाली वह शरण ही "दर्शन" का रूप धारण कर लेती है। यह दर्शन शब्द "दृशिर् प्रेक्षणे" धातु से करण अर्थ में "ल्युट् प्रत्यय" करने पर सिद्ध होता है। तब अर्थ हुआ, **"(दृश्यतेऽनेनेति दर्शनम्)** जिसके द्वारा देखा जाय वह दर्शन कहलाता है।" इस दर्शन शब्द का अर्थ उपलब्धि, बुद्धि अर्थ प्राप्त होते हैं। मेदिनीकोष में **"दृश्यते यथार्थतत्त्वमनेनेति दर्शनम्"** व्युत्पत्ति के अनुसार शास्त्र अर्थ सिद्ध किया गया है। किन्तु भारतीय ज्ञान परम्परा के अनुसार यथार्थ तत्त्व एक ही है। जिसके लिये अनेक आचार्यों ने तत्-तत्-कालों में परम सत्, चित्, आनन्द के यथार्थ स्वरूप को प्रतिपादित किया है। इन आचार्यों द्वारा प्रतिपादित स्वरूपों ने किसी विशिष्ट सिद्धान्तों वाली परम्परा को जन्म दिया। जैसे वैयाकरणों में शब्दाद्वयवाद, वेदान्त में अद्वैतवाद, द्वैतवाद और द्वैताद्वैतवाद आदि सम्प्रदाय प्रसिद्ध हुए। वैसे ही भारतीय दर्शन की परम्परा परमशिव को यथार्थ तत्त्व के रूप में स्वीकार करती है। इसकी प्रमुख विशेषता है कि शैव दर्शन एक धर्म के रूप विख्यात है।

हड़प्पा एवं मोहनजोदड़ो सभ्यता की खुदाई में शिवलिंग, मातृपूजा और शक्तिपूजा आदि के चिह्न प्राप्त हुए हैं।[1] जिसके विद्वान एक निर्णय पर पहुंचे हैं कि सहस्रों वर्षों से भारतवर्ष में शिवलिंग की पूजा तत्प्रतीकत्वेन होती आ रही है, जिससे पुरातत्ववेत्ताओं ने शैवधर्म का काल प्रायः ५००० ईसा पूर्व माना है।[2] कुछ विद्वानों ने वेद में आगत रुद्र, त्र्यम्बक, पशुपति आदि शब्दों के द्वारा शैवधर्मदर्शन की प्राचीनता कही है और इसे वैदिक सिद्ध किया है।[3] शैव धर्म और दर्शन के प्रमुख उपजीव्य आगम ग्रन्थ हैं। तान्त्रिक वाङ्मय के अनुसार परमशिव के मुख से निगम और आगम का प्रादुर्भाव हुआ। आगम से यामल शास्त्र की, यामल से वेदों की और वेदों से समस्त आर्ष साहित्य की उत्पत्ति हुई है।

वेदों के समान शैवागमों की नित्यता को सिद्ध करने के लिये गणेश टी. देशपाण्डेय ने आचार्य अभिनवगुप्त को उद्धृत करते हुए लिखा है कि "सृष्टि अभिव्यक्ति स्वरूप है, जो दो प्रकार की है - वाक्-रूपा और अर्थरूपा। इनमें मूलभूत सम्बन्ध हैं। एक के बिना दूसरा नहीं है। महाकवि कालिदास ने भी रघुवंश महाकाव्य में **वागर्थाविव सम्पृक्तौ वागर्थाविव प्रतिपत्तये** के द्वारा इसी ऐक्य सम्बन्ध की ओर द्योतित किया है। वाक् दो प्रकार की है- मानुषी और दैवी। आगम परम विमर्श को अभिव्यक्त करने के कारण शैवागम दिव्य

वाक् के रूप में प्रसिद्ध हैं। परावाक् के रूप में वाक् एक नित्य सत्ता है, जिसके साथ आगमों का तादात्म्य सम्बन्ध होने से इनका नित्यत्व सिद्ध है। अत एव इन शैवदर्शन के आगमों की उत्पत्ति कही और सुनी नहीं जाती है"।[4] वेदान्तवद् ये आगम भी द्वैत, द्वैताद्वैत और अद्वैत को प्रतिपादित करते हैं।

कश्मीर में शैवदर्शन की अद्वयपरम्परा

कश्मीर में शैवदर्शन के आविर्भाव सम्बन्ध में कहना नितान्त कठिन है। प्राप्त तथ्यों से ज्ञात होता है कि कश्मीर में द्वैत और अद्वैत की परम्परा समानान्तर रूप से प्रचलित थी। किन्तु कालान्तर में, शैवदर्शन की अद्वैत शाखा ही काश्मीर शैवदर्शन के रूप में प्रसिद्ध हुई। परिणामस्वरूप शैव सम्प्रदाय धर्म के साथ-साथ दर्शन के रूप में भी प्रतिष्ठित हुआ।

माहेश्वर सोमानन्द ने शैवादि रहस्यों की संख्या के लिये बहुवचन का प्रयोग किया है। परवर्त्ती आचार्यों ने रहस्यों को आगम कहते हुए अनन्त आगम कहे हैं। सोमानन्द के अनुसार कालान्तर में आगमविद् ऋषिगण लुप्त हो गए थे। मनुष्यों के अज्ञान की निवृत्ति के लिये अनुग्रह हेतु कैलाश पर्वत पर घूमते हुए श्रीकण्ठ रूप में परमशिव ने ऋषि दुर्वासा को आगमों का उपदेश किया। ऋषि दुर्वासा ने भी इस विद्या को मानस पुत्रों श्रीनाथ, आमर्दक और त्र्यम्बक को दिया। इन तीनों मानस पुत्रों में अद्वैत का ज्ञान मानस पुत्र त्र्यम्बक को प्राप्त हुआ।

शैवदीनि रहस्यानि पूर्वमासन् महात्मनाम्। ऋषीणां वक्त्रकुहरे तेष्वेवानुग्रहक्रिया॥

कलौ प्रवृत्ते यातेषु तेषु दुर्गमगोचरे। कलापिग्रागमप्रमुखे समुच्छिन्ने च शासने॥

कैलाशाद्रौ भ्रमन् देवो मूर्त्या श्रीकण्ठरूपया। अनुग्रहायावतीर्णश्चोदयामास भूतले॥

मुनिं दुर्वाससं नाम भगवानूर्ध्वरेतसम्। नोच्छिद्येत यथा शास्त्रं रहस्यं कुरु तादृशम्॥

ततः स भगवान् देवादेशं प्राप्य यत्नवान्। ससर्ज मानसं पुत्रं त्र्यम्बकादित्यनामकम्॥[5]

इस प्रकार द्वैत, द्वैताद्वैत और अद्वैत विद्या दार्शनिक तान्त्रिक सम्प्रदाय के रूप में अस्तित्व को प्राप्त हुई और उक्त तान्त्रिक समुदाय ही तत्तत् समुदायों के प्रवर्तकों की संज्ञा से भी प्रसिद्ध हुए। इसके साथ ही अर्ध-त्र्यम्बक नामक चतुर्थ सम्प्रदाय का भी उद्भव हुआ। काश्मीर शैवदर्शन में ६४ आगमों को उत्कृष्ट प्रमाण के रूप में स्वीकार किया जाता है। वर्तमान में काश्मीर शैवदर्शन के मूल आगम **मालिनीतन्त्र, विजयोत्तरतन्त्र, स्वच्छन्दतन्त्र, शिवसूत्र, विज्ञानभैरव और परात्रींशिका** उपलब्ध हैं। कान्तिचन्द्र पाण्डेय ने काश्मीर शैविज्म में काश्मीर शैवदर्शन की आठ प्रमुख शाखाओं का उल्लेख किया है। शैवदर्शन के प्रायः सभी आचार्य कश्मीर के निवासी हैं। अतः यह दर्शन काश्मीर शैवदर्शन संज्ञा से विभूषित है। इसके साथ ही काश्मीर शैवदर्शन को सोमानन्द ने **शैव और ईश्वराद्वयवाद[6]**, अभिनवगुप्त ने **त्रिकदर्शन[7], षडर्धशास्त्र[8] एवं स्वातन्त्र्यवाद[9]**, क्षेमराज ने **शिवाद्वयवाद, षडर्धक्रमविज्ञान[10] और रहस्यसम्प्रदाय[11]** तथा माधवाचार्य ने **प्रत्यभिज्ञादर्शन** संज्ञाओं से विभूषित किया है। जे. सी. चटर्जी ने स्पन्द और प्रत्यभिज्ञा शैवदर्शन की शाखाओं के मिश्रित रूप को काश्मीर शैवदर्शन के नाम से अभिहित किया है।[12]

शैवदर्शन परम्परा में माहेश्वर सिद्ध सोमानन्द नाथ

शिवदृष्टि ग्रन्थ त्र्यम्बक द्वारा प्रवर्तित अद्वैत तंत्र से सम्बन्धित है। शिवदृष्टि के रचयिता सोमानन्द के अनुसार सोमानन्द त्र्यंबक के १९वें वंशज हैं। सोमानन्द द्वारा लिखित वंशावली में उनसे पूर्व के १४ पूर्वजों का कोई विशेष नाम प्राप्त नहीं होता। सोमानन्द द्वारा प्रदत्त ऐतिह्य के अनुसार उक्त १४ पूर्वजों को सिद्ध संज्ञा से सम्बोधित किया गया है। (खमुत्पपात संसिद्धस्तत्पुत्रोऽपि तथा तथा॥ सिद्धस्तद्वत्सुतोत्पत्त्या सिद्धा एव चतुर्दश। शिवदृष्टि ७/११३, ११४) सिद्ध परम्परा का निर्वहण करते हुए प्राप्त सभी आचार्यों के नाम से पूर्व भी सिद्ध शब्द का प्रयोग किया जाता है। इसके पश्चात् १५वीं पीढ़ी के प्रारम्भ से सभी आचार्यों के नाम प्राप्त होते हैं क्योंकि १५वें सिद्ध सर्वशास्त्रविशारद **मानस पुत्र संगमादित्य** (यावत् पञ्चदशः पुत्रः सर्वशास्त्रविशारदः। शिवदृष्टि ७/११४) ने एक ब्राह्मण कन्या से (अर्तयित्वा ब्राह्मणीं तामानयामास। शिवदृष्टि ७/११७) ब्राह्म विवाह किया था। वे भ्रमण करते हुए कश्मीर में आकर बस गये। (ब्राह्मणेन विवाहेन ततो जातस्तथाविधः। तेन यः स च कालेन कश्मीरेष्वागतो भ्रमन्॥ शिवदृष्टि ७/११८) त्र्यम्बकादित्य की वंशावली में संगमादित्य के पश्चात् क्रमशः वर्षादित्य, अरुणादित्य और आनन्द हुए। आनन्द के पुत्र सोमानन्द हुए। नाम्ना स संगमादित्यो वर्षादित्योऽपि तत्सुतः। तस्याप्यभूत् स भगवानारुणादित्यसंज्ञकः।। आनन्दसंज्ञकस्तस्मादुद्बभूव तथाविधः। तस्मादस्मि समुद्भूतः सोमानन्दाख्य ईदृशः।। शिवदृष्टि ७/११९-१२०)

सोमानन्द के काल निर्धारण हेतु अभिनवगुप्त की कालावधि और अभिनवगुप्त प्रदत्त गुरु-परम्परा का प्रयोग किया जाता है। क्योंकि अभिनवगुप्त ने सोमानन्द को प्रपितामह गुरु स्वीकार किया है। अभिनवगुप्त का समय ९५० से १०२५ ईस्वी के मध्य स्वीकृत है। इसलिए सोमानन्द का काल अभिनवगुप्त से प्रायः एक शताब्दी पूर्व ८५० ईस्वी स्वीकार किया जाता है।

शिवदृष्टि और उसकी वृत्ति

सिद्ध सोमानन्दनाथ ने वसुगुप्त द्वारा संकलित अथवा रचित शिवसूत्र से सम्बन्धित परमतखण्डनार्थ और स्वमतपोषणार्थ तर्कपूर्ण ग्रन्थ लिखा, सोमानन्द ने इस ग्रन्थ को "शिवदृष्टि" नाम से सम्बोधित किया है। शिवदृष्टि शब्द का अर्थ- शिव अर्थात् परम सत्ता, उसकी दृष्टि अर्थात् दर्शन ही शिवदृष्टि है। इस प्रकार जिस ग्रंथ में परम सत्ता की यथार्थता का अद्वैत सिद्धांत प्रतिपादित किया गया है, वह शिवदृष्टि है। (करोमि स्म प्रकरणं शिवदृष्ट्यभिधानकम्। एवमेषा त्र्यम्वकारव्या तेरम्बादेशभाषया॥ शिवदृष्टि ७/१२१) इस प्रकरण ग्रंथ में सात आह्निक तथा अनुष्टुप् छंद में निबद्ध प्रायः ७२२ श्लोक हैं।

विद्वानों ने उत्पलदेव का काल प्रायः ८७५ से ९२५ ईस्वी के मध्य माना है। उत्पलदेव ने स्वयं को सोमानन्द का शिष्य बताया है।[13] उत्पलदेव ने शिवदृष्टि में प्रतिपादित सिद्धान्तों को तर्कपूर्ण विस्तार देने के लिये ईश्वरप्रत्यभिज्ञाकारिका लिखी। उत्पलाचार्य ने शिवदृष्टि पर वृत्ति ईश्वरप्रत्यभिज्ञाटीका के पश्चात् लिखी थी। (एतत्सर्वमीश्वरप्रत्यभिज्ञाटीकायां निपुणमालोचितम्। शिवदृष्टिवृत्ति १/१२) वर्तमान में यह वृत्ति चतुर्थ आह्निक की ७४वीं कारिका तक प्राप्त होती है। शिवदृष्टि के प्रथम श्लोक की वृत्ति के अनुसार उत्पलदेव ने यह वृत्ति अपने पुत्र **विभ्रमाकर और सहपाठी पद्मानन्द** के कहने पर लिखी थी। (विभ्रमाकरसंज्ञकेन स्वपुत्रेणास्मि चोदितः। पद्मानन्दाभिधानेन तथा सब्रह्मचारिणा॥ शिवदृष्टिवृत्ति १/१)

अभिनवगुप्त के अनुसार उन्होंने भी शिवदृष्टि ग्रन्थ पर सोमानन्द की स्वोपज्ञवृत्ति का अध्ययन किया था। उस स्वोपज्ञवृत्ति के पढ़ने के पश्चात् स्वयं एक वृत्ति लिखी थी किन्तु वर्तमान में दोनों ही वृत्तियां अनुपलब्ध हैं।

शिवदृष्टि का प्रतिपाद्य

शैवदर्शन परम्परा में प्रतिपादित "प्रत्यभिज्ञा दर्शन" का प्रारम्भ सर्वप्रथम शिवदृष्टि में ही प्राप्त होता है। शिवदृष्टि में मुक्ति के चार पारम्परिक मार्ग **शाम्भव, शाक्त, आणव और प्रत्यभिज्ञा** स्वीकार किए हैं। प्रत्यभिज्ञा मार्ग अन्य तीन के अपेक्षा सरलतर और नवीन है। सोमानन्द के समकालीन शैवाचार्य वसुगुप्त के शिवसूत्र और स्पन्दकारिका ग्रन्थ अद्वैत शैवदर्शन के मात्र सिद्धान्तों के प्रतिपादक हैं, इन ग्रन्थों में शैव मत की सिद्धि मात्र की गयी है। शिवदृष्टि में सिद्धान्तों की व्याख्या के साथ-साथ परमत-खण्डनात्मक पद्धति से युक्त तर्कपूर्ण शैली का प्रयोग किया गया है। शिवदृष्टि में वेदांत के अनेक वादों की आलोचना की है किंतु अपने से पूर्ववर्ती आचार्य शंकर अथवा उनके सिद्धान्त का कहीं भी उल्लेख नहीं किया है। सोमानन्द ने शिवदृष्टि में वैयाकरणों के शब्द-विवर्त की आलोचना प्रबलतया प्रतिपादित की है। अत एव बी.एन. पंडित के अनुसार कश्मीर में सोमानन्द के समय तक शब्द-विवर्त का प्रचार था किन्तु शंकर का नहीं। शिवदृष्टि में औपनिषद वेदांत के १० मतों एवं कुल २२ दार्शनिक मतों का खंडन किया गया है।[14] शिवदृष्टि तर्कप्रधान प्रकरण ग्रन्थ है। इसका वैशिष्ट्य है कि इसमें न्याय की शब्दावली का ग्रहण तो किया है किन्तु इनका लक्षण अपना है जैसे समवायिकारण। उत्पलदेव ने इसका लक्षण **"सजातीयतयाऽविभागेन वा स्थितम्"** किया है, जो न्याय दर्शन सम्मत नहीं है।

शिवदृष्टि को स्थूल दृष्टि से देखने के पश्चात् इसका सूक्ष्म दृष्ट्या सर्वप्रमुख प्रतिपाद्य परमशिव है। सोमानन्द के अनुसार **"सर्वं शिवात्मकम्"** अर्थात् शिव से पृथक् यह संसार कुछ भी नहीं है।

परमशिव

शक्ति और शक्तिमान् में सदैव अभेद होता है (शक्तिशक्तिमतोरभेदात् । शिवदृष्टिवृत्ति १/२, शक्तिशक्तिमतोरभेदः शिवदृष्टि ३/३)। इसलिए शिव और शक्ति एक दूसरे से पृथक् नहीं है। परमशिव ही शक्ति से शक्त होकर अपनी इच्छा शक्ति के द्वारा विभिन्न पदार्थों की सत्ताओं को करने में समर्थ है (न शिवः शक्तिरहितो न शक्तिव्यतिरेकिणी। शिवः शक्तस्तथा भावानिच्छया कर्तुमीदृशान्। शिवदृष्टि ३/२,३)।

प्रकाशस्वरूप- काश्मीर शैवदर्शन के अनुसार परमशिव ही परमसत्य है। वह शुद्धप्रकाशस्वरूप है। यह प्रकाश सूर्य और मणि के प्रकाश के समान जड़ नहीं है अपितु चैतन्यस्वरूप है। परमशिव अपनी स्वातन्त्र्य शक्ति के कारण दो स्वरूपों से युक्त है- विश्वोत्तीर्ण और विश्वमय। परमशिव अपने इन दोनों रूपों में एक साथ सर्वदा रहता है।

विश्वोत्तीर्ण दशा - विश्वोत्तीर्ण दशा में परमशिव केवल प्रकाशमय है उससे पृथक् कुछ भी नहीं। यह निखिल विश्व

परमशिव के विश्वोत्तीर्ण रूप में "**मयूराण्डरसन्याय**" से स्थित है। विश्वोत्तीर्ण रूप में परमशिव को विश्व का भान नहीं होता। इसलिये विश्वोत्तीर्ण दशा में परमेश्वर केवल असीम शुद्ध "अहम्" स्वरूप है। पूर्ण तत्व परमशिव अव्यक्त, अव्याकृत, निरंश, सन्मात्र, चिरनिगूढ सत्य की वह परमगहन स्थिति है, जिसका किसी भी साधन से निर्वचन नहीं किया जा सकता है। विश्वोत्तीर्ण की इस गभीरतम स्थिति में सत्, चित् और आनन्द की कल्पना भी असम्भव है। अत एव परमशिव अवाङ्मनसगोचर हैं।

विश्वमय दशा - परमशिव विश्वमय दशा में सच्चिदानन्दस्वरूप है। परमशिव अपनी सत्ता का स्वयमेव विमर्श करता है। विमर्श के पश्चात् परमशिव में ही शक्ति का उल्लास अथवा स्पन्दन होता है। पूर्वोक्त सन्मात्र की स्थिति में ही आत्मप्रकाश रूप में परमशिव की एक कला अथवा सूक्ष्मतम शक्ति का आविर्भाव होता है, जिसे चित् शक्ति कहते हैं। यह चित् ही पूर्ण परमशिव की बहिर्मुखता का प्रथम प्रकाश है। परमशिव का यही विमर्श **प्रत्यवमर्श, परावाक्, शक्ति** आदि संज्ञाओं से अभिहित है।

परमशिव में स्पन्द के कारण परमशिव सत् से चित् का आविर्भाव हुआ। यह स्पन्द एक ओर सत् को गृहीत करके स्थित है तो दूसरी ओर चित् को भी स्पन्दित करता है, इस प्रक्रिया से चित्-तत्त्व में आनन्द का आविर्भाव होता है। इस प्रकार सत् के साथ चित् आन्तरिक रूप से और आनन्द के साथ बाह्य रूप से रहता है। चित् सत्परमशिव की आन्तरिक शक्ति और आनन्द परमशिव की बाह्य शक्ति है। यह भेद केवल व्यवहार के लिये है वस्तुतः भेद नहीं है। परमशिव की ही सर्वत्र सत्ता विद्यमान है। परमशिव ही अपनी विमर्शन शक्ति से सत्, चित्, आनन्द रूपों में बहिर्मुखता को प्राप्त होते हैं जिससे परमशिव विश्वमय रूप है।

विमर्श- अद्वयवादी शैव तत्त्वमीमांसा में विमर्श परमशिव के स्वरूप का घटक है। शिवाद्वयवाद में विमर्श प्रायः संवेदन-सामर्थ्य होता है। यद्यपि परमशिव से भिन्न कुछ भी नहीं है, किन्तु आत्मरूपत्व अथवा परत्व आदि शब्दों का प्रयोग केवल व्यवहार के लिये ही किया जाता है। (शिवरूपमिति स्वसंवेदने सिद्धे व्यवहारमात्रं साध्यमिति। शिवदृष्टिवृत्ति १/३)

सोमानन्द ने परमसत् को "परमशिव" कहा है और शिवदृष्टि में परमशिव के लिये "निर्वृतचित्" शब्द का प्रयोग किया गया है। (आत्मैव सर्वभावेषु स्फुरन्निर्वृतचिद्विभुः। अनिरुद्धेच्छाप्रसरः प्रसरद्दृक्क्रियः शिवः॥ शिवदृष्टि १/२)। यह निर्वृत पूर्ण परितृप्ति अथवा स्वात्मविश्रान्ति की अवस्था है। "निर्वृत" से विशुद्ध आनन्द की अवस्थिति की अभिव्यंजना होती है, जो प्रकाशरूपता का चित् है। इस प्रकार शिवदृष्टि में विमर्श का स्पष्टतया अभिधान प्राप्त नहीं होता है। परमशिव के चमत्कार से अनुप्राणित विमर्शात्मिका वृत्ति निर्वृत अंश से ही लक्षित है। चित् का चित्त्व भी इसी विमर्श से अनुप्राणित होता है। इस विमर्श को प्रकाश का आत्मा और चैतन्य का प्रतिनिधि कहा जाता है।

विमर्श की अनुभूति अहंबोध के रूप में होती है। यह अहं अन्तःकरण से जन्य सीमित प्रमातृत्व का सूचक न होकर मात्र स्वरूप के विमर्श का ही बोधक है। विमर्श अहं आदि संकेतों से उत्तीर्ण आन्तर अभिलपन की सांकेतिक अभिव्यक्ति मात्र है। उत्पलदेव ने आन्तर अभिलपन को काश्मीर शैव तत्त्वमीमांसा में स्थान दिया है और परवर्ती शैव दार्शनिक इसका यथोचित विकास करते हैं। उत्पल की वृत्ति के अनुसार सोमानन्द निर्वृतचित् रूप को परमशिव के भासन के **"परा, परापरा और अपरा"** तीन स्तरों पर मानते हैं।[15] विमर्श के अन्य नाम भी प्राप्त होते हैं। जिनमें प्रत्यवमर्श प्रमुख है। इसी "प्रत्यवमर्श" को आन्तर अभिलापात्मक शब्दनस्वभाव रूप से वर्णित किया गया है।

प्रकाशविमर्श- काश्मीर शैवदर्शन में प्रकाशविमर्श के आधार पर ही दार्शनिक चिन्तन किये जाते हैं। विशुद्ध दार्शनिक भाषा में जिस "सत्" का अन्वेषण किया जाता है वह प्रकाशविमर्शात्मा है, जो परम शिव के पूर्ण स्वरूप को अभिव्यक्त करता है। प्रकाश और विमर्श अपने-अपने कर्तव्यों के निष्पादन के कारण परस्पर एक दूसरे के सम्पूरक हैं। विद्वान् कथनात्मक विश्लेषण के लिये ही परमतत्त्व के प्रकाश और विमर्श घटकों का पृथक्-पृथक् विवेचन करते हैं। प्रकाश में क्रियात्मकता विमर्श के द्वारा ही आती है और प्रकाश से ही विमर्श को विषय प्राप्त होता है।

परमार्थ परम शुद्ध प्रकाशस्वरूप होते हुए परम शुद्ध विमर्शरूप भी है। विश्वमयता की स्थिति में प्रकाशविमर्श साथ-साथ रहते हैं। विमर्श कोई पृथक् वस्तु नहीं है, अपितु प्रकाश का स्वभाव है।[16] प्रकाश की प्रकाशता विमर्श है अथवा विमर्श की विमर्शता प्रकाश है। जिस प्रकार मणि के प्रकाश में विमर्शन शक्ति का अभाव होता है और वह प्रकाश होते हुए भी जड़ ही है, उसी प्रकार यदि प्रकाश में विमर्श न हो तो परमशिव जड़ हो जायेगा, जो शैवाचार्य सोमानन्द को अभिप्रेत नहीं है।

जिस प्रकार तिल में तेल, दधि में घृत स्थित है, तिल-दधि आदि से पृथक् नहीं है। उसी प्रकार समस्त विश्व शुद्ध संविद् परमशिव में सदैव रहता है। (अस्मद्रूपसमाविष्टः

स्वात्मनात्मनिवारणे। शिवदृष्टि १/१)। परमशिव ही अपनी विमर्शन शक्ति द्वारा स्वयं को समस्त रूपों में भासित करता है।[17] विश्वमय दशा में वह परमशिव शुद्ध संविद् रूप है। जड़ और चेतन भी वह संविद् ही है। उस अनुत्तर संविद् में देशकृत और कालकृत संकोचों से संकुचितता नहीं आती है। इसलिये परमशिव सर्वदा पूर्ण हैं।

विश्वोत्तीर्ण और विश्वमय दशा में परमशिव पञ्चकृत्य सृष्टि, स्थिति, संहृति, विलय और अनुग्रह अनवरत रूपेण करता है।[18] ये पञ्चकृत्य पूर्ण चिदानन्दमात्र परमशिव में प्रकाशित होते रहते हैं तथा उस परमशिव में पञ्चकृत्यों का लय भी होता रहता है। उक्त दोनों रूपों में परमशिव की इच्छा, ज्ञान और क्रिया शक्तियां परमशिव में ही विलीन रहती हैं। (स यदाऽऽस्ते चिदाह्लादमात्रानुभवतल्लयः। तदिच्छा तावती तावज्ज्ञानं तावत्क्रिया हि सा॥ शिवदृष्टि १/३, पञ्चप्रकारकृत्योक्तिशिवत्वान्निजकर्मणे। शिवदृष्टि १/१२)। परमशिव की इच्छादि तीनों शक्तियों से युक्त अवस्था **"परा अवस्था"** है (परावस्थायां पुनः "पूर्णोऽहम्" इत्येव स्वस्वभावः प्रकाशते। शिवदृष्टिवृत्ति १/३) क्योंकि इस दशा में परमशिव में इच्छा, ज्ञान और क्रिया तीनों शक्तियां सुसूक्ष्म रूप से सामरस्यभाव से स्थित हैं। (सुसूक्ष्मशक्तित्रितयसामरस्येन वर्तते। चिद्रूपाह्लापरमो निर्विभागः परस्तदा॥ शिवदृष्टि १/४)।

परमशिव की शक्तियां

शिवदृष्टि की वृत्ति में शक्ति के स्वरूप को प्रतिपादित किया गया है कि "**तत्तत्सृष्ट्यादिभेदानुद्वमन्ती संहरन्ती च सदा पूर्णा च कृशा चोभयरूपा चानुभयरूपा चाक्रममेव स्फुरन्ती स्थिता"।[19]** अर्थात् शक्ति ही परमशिव के भेदों को उद्वमन और संहरण करती है। यह शक्ति **पूर्ण, सूक्ष्म, उभयरूप और अनुभयरूप** है। सोमानन्द ने शिवदृष्टि के मंगलाचरण में ही परमशिव को अपनी शक्ति से अपना विस्तार करने वाला बताया है (शिवः करोतु निजया नमः शक्त्या ततात्मने॥ शिवदृष्टि १/१)। परमेश्वर में विविध शक्तियों के सामानाधिकरण्य से ऐश्वर्य की सिद्धि होती है। क्षेमराज ने शक्ति के स्वरूप को परिभाषित किया है, "**आनन्दोच्छलिता शक्तिः सृजत्यात्मानमात्मना"।[20]** जब परमशिव अपनी स्वातन्त्र्य शक्ति से अपने हृदय में स्थित इच्छा-ज्ञान-क्रियारूपी त्रिकोण के माधुर्य से परिवर्धित उल्लास से अपने ही हृदय में बीजरूपेण स्थित "अर्थ तत्व" को बाहर करना चाहता है तभी वह परमशिव ही शक्ति की संज्ञा से अलंकृत होता है।[21] इस प्रकार चित्-तत्त्व की क्रियाशीलता ही शक्ति है। किन्तु सोमानन्द के अनुसार परमशिव की इच्छा का प्राधान्य ही शक्ति है, आनन्द उस इच्छा का उद्वेलकमात्र है (तदेवं प्रसूतो देवः कदाचिच्छक्तिमात्रके। बिभर्त्ती रूपमिच्छातः..॥ शिवदृष्टि १/२९)। परमशिव की प्रमुख पांच शक्तियां हैं - चित्, आनन्द, इच्छा, ज्ञान और क्रिया।[22]

चित् शक्ति- परमशिव के प्रकाशस्वरूप को चित् शक्ति कहते हैं।[23] इस अनन्यापेक्ष्य प्रकाश से परमशिव प्रकाशनीय पदार्थ के अभाव में भी प्रकाशित होता है। अत एव परमशिव स्वप्रकाश मात्र है। जिस प्रकार बिना किसी के प्रकाश से प्रकाशित सूर्य चन्द्र को तथा समस्त लोक को प्रकाशित करता है उसी प्रकार परमशिव स्वयं को प्रकाशित करते हुए सभी को प्रकाशित करते हैं। अतः परमशिव प्रकाशरूप है। चिद्रूप परमशिव योगियों के समान आवश्यकता अनुसार स्थूल और सूक्ष्म रूपों को धारण करता है और स्वयं को प्रकाशित करता है। (चिदात्मनो हि स्थूलस्य सूक्ष्मस्याथ विकारिता। परस्य तादृगात्मत्वमुदपद्येतात्र योगिवत्। शिवदृष्टि ३/३३, ३४)

आनन्द शक्ति- परमशिव के स्वातन्त्र्य को "आनन्द शक्ति" कहते हैं। स्वातन्त्र्य के कारण परमेश्वर को किञ्चिदपि श्रम नहीं करना पड़ता है। समस्त सृष्टि परमशिव की क्रीडा-मात्र है। परमशिव का स्वातन्त्र्य शिवरूप सृष्टि को परमशिव में सदैव ही विश्रान्ति प्रदान करता रहता है।

इच्छा शक्ति- किसी भी स्वरूप की अभिव्यक्ति से पूर्व कार्य में प्रवृत्त होने की इच्छा होती है। स्वरूपाभिव्यक्ति से पूर्व परम शिव की "इच्छा" स्वातन्त्र्य का चमत्कार-मात्र है। परमशिव के चमत्कार को ही "इच्छा शक्ति" कहते हैं।[24] परमेश्वर विश्वसत्ता की इच्छा करता है। परमशिव की अन्य तीनों शक्तियों में इच्छा शक्ति प्रमुख है क्योंकि चिद्, आनन्द शक्तियों और ज्ञान, क्रिया शक्तियों का कारण "इच्छा शक्ति" ही है। सोमानन्द के अनुसार परमशिव ही इच्छा शक्ति से स्वयं को रूपवान् करता है। चिद्रूप परमशिव अपनी इच्छा शक्ति से ही सर्वभावों और अनेकत्व को प्राप्त करता है।[25] इच्छा शक्ति के कारण ही परमशिव समस्त जगत् को करने में स्वतन्त्र है। यदि इच्छा शक्ति न होती तो परमशिव भी पराधीन हो जाते। जिससे परमशिव की सत्ता का उच्छेद हो जाता।[26] परमशिव की इच्छा शक्ति के कारण भावमय जगत् न्याय और वैशेषिक के समान जड़ नहीं है।[27]

ज्ञान शक्ति- इच्छा शक्ति से ही विकसित आमर्शात्मकता ज्ञान शक्ति है। इसको विमर्श शक्ति भी कहते हैं।[28] इच्छा से ही किसी का ज्ञान सम्भव है और ज्ञान के पश्चात् क्रिया। इस पौर्वापर्य क्रम के कारण इच्छा शक्ति ज्ञान शक्ति का आधार है। आमर्श का अभिप्राय "ईषत्तया वेद्योन्मुखता" है।

www.ignited.in

वस्तु का ज्ञान ही क्रिया अथवा भावना नहीं हो सकती है, क्योंकि क्रिया किसी विषय का ज्ञान होने के पश्चात् होती है। इसीलिये क्रिया शक्ति का आधार "ज्ञान शक्ति" है। सोमानन्द के अनुसार परमशिव ही ज्ञान शक्ति से "सदाशिव" प्रमातृत्व रूप को प्राप्त होता है। इच्छा शक्ति के बाद कार्य का ज्ञान बुद्धिस्थत्वेन दर्शन होता है। इसके पश्चात् ज्ञाताओं के लिये कार्य को ज्ञेय रूपता प्रदान करने वाली शक्ति "ज्ञान शक्ति" कहलाती है (तत्कर्मनिर्वृतिप्राप्तिरौमुख्यं तद् विकासिता। अनन्तरं हि तत्कार्यज्ञानदर्शनशक्तिता॥ शिवदृष्टि १/२०)। उत्पलदेव ने ज्ञानशक्ति को चिदात्मा परमशिव की प्रकाशनशक्तिरूपता कहा है।[29]

क्रिया शक्ति- परमशिव की समस्त आकार में स्फुरित होने की शक्ति "क्रिया शक्ति" है। जब परमशिव की चिति शक्ति अपना प्रसार करती है तो समस्त विश्व उन्मिषित और व्यवस्थित होता है। प्रसार के अवरुद्ध होने पर विश्व का विकास भी अवरुद्ध हो जाता है।[30] परमेश्वर में उपर्युक्त परिवर्तन का सामर्थ्य और योग्यता ही शक्ति है।[31] सोमानन्द के अनुसार परमशिव ही क्रिया शक्ति से "ईश्वर अवस्था" को प्राप्त होता है। परमशिव संसार को सर्वजनसंवेद्य बनाने के लिये "ज्ञान शक्ति" को स्थूल रूप प्रदान करता है। यही "क्रिया शक्ति" है (ज्ञानशक्तिस्तदर्थं हि योऽसौ स्थूलः समुच्चयः। सा क्रियाशक्तिरुदिता ततः सर्वं जगत् स्थितम्॥ शिवदृष्टि १/ २१)। उत्पलदेव ने परमशिव की इच्छा शक्ति के विषय में उद्यम को "क्रिया शक्ति" कहा है (सर्वप्रमातृवेद्यस्थूलकार्याकारसम्पत्तिफलः समुद्यम इच्छाविषय एव क्रियाशक्तिः। शिवदृष्टिवृत्ति १/२१)।

उक्त विवेचनानुसार परमशिव ही विभिन्न शक्तियों से अन्य रूपों को प्राप्त होता है (एवं सर्वसमुत्पत्तिकाले शक्तित्रयात्मता। न निवृत्ता, न चौन्मुख्यं निवृत्तम्, नापि निर्वृतिः। शिवदृष्टि १/२२)। सप्तविध प्रमातृत्व भी परमशिव की अपनी शक्तियों का ही रूप है। सोमानन्द ने वैयाकरणों की पश्यन्ती वाक् के खण्डन के अवसर पर सदाशिवरूप प्रमाता का उल्लेख किया है। अतः तद्विश्लेषणार्थ सप्तविध प्रमाताओं का वर्णन आवश्यक है।

सप्तविध प्रमाता

काश्मीर शैवदर्शन का वैशिष्ट्य है कि इसमें प्रमेय के अनुसार प्रमाता हैं। अभेदज्ञानमयी संसाररूपी भ्रान्ति की क्रीडा करने की इच्छा से परमशिव आत्मप्रच्छादनात्मक मायारूप धारण कर छत्तीस रूपों को प्राप्त होता है। परमशिव व्यवहार की योग्यता पर्यन्त नाना शरीरों को धारण करता है (बिभ्रद्बिभर्ति रूपाणि तावता व्यवहारतः। यावत् स्थूलं जडाभासं संहतं पार्थिवं घनम्॥ तथा नानाशरीराणि भुवनानि तथा तथा। विसृज्य रूपं गृह्णाति प्रोत्कृष्टाधममध्यमम्॥ शिवदृष्टि १/३३, ३४)। शैवदर्शन में छत्तीस तत्त्व (सांख्याभिमत २५ + माया + माया के ५ कञ्चुक (कला+विद्या+राग+काल+नियति) = अशुद्धाध्व तत्त्व + शिव + शक्ति + सदाशिव + ईश्वर + सद्विद्या = शुद्धाध्व तत्त्व।) प्रमेय रूप में स्वीकृत हैं, उन पदार्थों के अनुसार सात प्रमाता **शिव, सदाशिव (सादाख्य), मन्त्रमहेश्वर, मन्त्र, विज्ञानाकल, प्रलयाकल और सकल** हैं।

शिव प्रमाता- परम शिव स्वयं प्रमाता है। परमशिव विभिन्न शरीरों को धारण करते हुए विभिन्न प्रकार की भावनाओं से युक्त हो जाता है तथा समस्त लोक में उन भावनाओं से परिपूर्ण शरीरों से व्याप्त रहता है (स्थानानुरूपतो देहान् देहाकारेण भावनाः। आददत् तेन तेनैव रूपेण प्रतिभाव्यते॥ शिवदृष्टि १/३५)।

सदाशिव प्रमाता- शैवदर्शन परमशिव में इच्छा का प्राधान्य होने पर परमशिव ही "सदाशिव अथवा सादाख्य" तत्त्व स्वीकार करता है। यह अपने शुद्ध प्रकाशात्मक विमर्श अथवा विमर्शात्मक प्रकाश में "इदम्" की अस्पष्टता के साथ व्यक्त "अहम्" का अनुभव करता है। सदाशिव तत्त्व परमशिव का अन्तर्निमेष है। इस अवस्था में परमशिव स्वयं ही स्वयं में अपने से भिन्न किसी प्रमेय का दर्शन करता है, जिसके कारण परमशिव का अंशतः गोपन हो जाता है। इस अनुभव का स्वरूप "अहम्-इदम्" है। इसमें "इदम्" अस्फुट अस्तित्व को प्राप्त-मात्र होता है, किन्तु सर्वत्र "अहम्" भाव ही रहता है।[32] सोमानन्द ने सदाशिव के उद्रेक का निमित्त कभी "**इच्छा**" और कभी "**ज्ञान शक्ति**" को माना है। (बिभर्ति रूपमिच्छातः कदाचिज्ज्ञानशक्तिः। कदाचिज्ज्ञानशक्तितः। सदाशिवत्वमुद्रेकात्...॥ शिवदृष्टि १/३०) उत्पलदेव के अनुसार दोनों शक्तियों द्वारा परमशिव ही "**पराऽपर**" अवस्था में सदाशिव रूप हैं।[33]

मन्त्रमहेश्वर प्रमाता- सदाशिव तत्त्व में स्थित प्राणीवर्ग की "मन्त्रमहेश्वर संज्ञा" है। मन्त्रमहेश्वर का सदाशिव में अवस्थान परमशिव की अनुकम्पा से ही होता है। इस अवस्था में सदाशिव जैसी "स्फुट अहम् और अस्फुट इदम्" की अनुभूति होती है।[34] सोमानन्द के अनुसार परमशिव क्रियाशक्ति के प्राधान्य से युक्त होने पर ऐश्वर्यमयी स्थिति को प्राप्त होता है।[35]

मन्त्रेश्वर प्रमाता- सोमानन्द के अनुसार परमशिव का बहिर्निमेष "ईश्वर तत्त्व" है।[36] ईश्वर तत्त्व में परमशिव की "क्रिया शक्ति" का प्राधान्य रहता है।[37] इस दशा में

"इदम्-अहम्" का विमर्श होने पर "इदम्-अहम्" का सामानाधिकरण्य रहता है। इस अवस्था में प्रमाता मन्त्रेश्वर रहता है।[38]

मन्त्र प्रमाता- शुद्धविद्या तत्त्व के द्वारा ईश्वर, सदाशिव, शक्ति और शिव अपने-अपने स्वरूपों का अनुभव करते है क्योंकि सद्विद्या के अतिरिक्त विश्व ब्रह्माण्ड में ज्ञान का अन्य कोई साधन नहीं है। सोमानन्द के अनुसार विद्या तत्त्व में स्थूल अनुभूति का प्राधान्य होता है।[39] अनन्तभट्टारक परमशिव द्वारा अधिष्ठित **"मन्त्र"** विद्यातत्त्व का प्रमाता है।[40] इस अवस्था में "अहम्-इदम्" की प्रतीति स्पष्टतया होती है।

विज्ञानाकल प्रमाता - सद्विद्या और माया के मध्य स्थित प्रमाता विज्ञानाकल कहाता है।[41] यह दशा महामाया की है। यहां विद्यात्मक प्रकाश तो रहता है किन्तु परमशिव का आभास नहीं होता है। इसलिये प्रकाशमात्र को ही आत्मा माना जाता है।[42] सोमानन्द ने विज्ञानकेवली को **"आत्मबोधी और विकलवत्"** कहा है। (आत्मबोधी विकलवत् क्वचित् विज्ञानकेवली। शिवदृष्टि १/४३, आत्मबोधी न तु पुर्यष्टकस्थः प्रलयाकलवच्च ग्राह्यरहितः कार्ममलास्पर्शी विज्ञानकेवलिरूपः। शिवदृष्टिवृत्ति १/४३)।

प्रलयाकल प्रमाता- प्रलयकेवली प्रमाता के शरीरावयव प्रलयावस्था में विनष्ट हो जाते हैं। (मायायां शून्यप्रमातृणां प्रलयकेवलिनां स्वोचितं प्रलीनकल्पं प्रमेयम्। प्रपञ्चहृदय ३)। उत्पलदेव प्रलयाकल प्रमाता में मायीय मलों को विकल्प रूप से स्वीकार करते हैं। (क्वाप्यवस्थाभेदावस्थितविज्ञानमय एवाम्लानपशुभावः मायाख्यमलोपस्थापितभिन्नग्राह्यशून्यः प्रलयकेवली भवति। शिवदृष्टिवृत्ति १/४३) सोमानन्द ने प्रलयकेवली को **"अप्रबुद्ध और निष्कल"** कहा है (अप्रबुद्धो निष्कलश्च क्वचित् प्रलयकेवली। शिवदृष्टि १/४३)।

सकल प्रमाता- मानवीय सृष्टि दशा में सकल प्रमाता है, क्योंकि इस दशा में मानव में आणव, कार्म और मायीय तीनों मल रहते हैं। ये तीनों प्रलयाकल के आश्रित रहते हैं, परन्तु मानव के शरीरावयव इस स्थिति में भी शेष रहते हैं (क्षितिपर्यन्तावस्थितानां तु सकलानां सर्वतो भिन्नानां परिमितानां तथाभूतमेव प्रमेयम्। प्रपञ्चहृदयम् ३)। सोमानन्द ने सकल प्रमाता को केवलेश और केवलशम्भु नाम से अभिहित किया है (केवलेशदृढत्वेन क्वचित् केवलेशंभुता। शिवदृष्टि १/४२)।

निष्कर्षतः देखते हैं कि शैवदर्शन के शिवाद्वयवाद को प्रतिपादित करने वाले तत्त्वों में परमशिव, शक्ति और सप्तविधप्रमाता अन्यतम स्थान रखते हैं। इनके प्रयोग से ही माहेश्वर सिद्ध सोमानन्द ने शिवदृष्टि ग्रन्थ में अन्य दर्शनमतावलम्बियों का खण्डन तथा परमशिव की दृष्टि को मण्डित किया है। शिवदृष्टि के अध्ययन से ज्ञात होता है कि आचार्य सोमानन्द से पूर्व भी शैवदर्शनवेत्ताओं की स्थिति बनी रही है। परवर्ती अभिनवादि ने इन्हीं के सिद्धान्तों को अपने ग्रन्थों में उद्घाटित, विकसित और सर्वजनबोधगम्य किया है।

सन्दर्भ:

1. मोहनजोदड़ो तथा सिन्धु सभ्यता, पृष्ठ ९६, ९७, १०३
2. प्राचीन सभ्यता, पृष्ठ १४
3. काश्मीर शैवदर्शन, द्वितीय अध्याय, पृष्ठ २०
4. अभिनवगुप्त, तृतीय अध्याय, पृष्ठ १६
5. शिवदृष्टि ७/१०७-१११
6. ईश्वराद्वयवाद एव युक्तियुक्तः। शिवदृष्टि २
7. तन्त्रालोक खण्ड २, पृष्ठ ७, २०, ४९
8. तन्त्रसार, पृष्ठ १६
9. ईश्वरप्रत्यभिज्ञाविवृतिविमर्शिनी १, पृष्ठ ९
10. तन्त्रालोकविवृति १, पृष्ठ २८
11. शिवसूत्रविवृति, पृष्ठ १
12. काश्मीर शैविज्म, पृष्ठ १
13. उवाचोत्पलदेवश्च श्रीमानस्मद्गुरोर्गुरुः। तन्त्रालोक १२/२५
14. काश्मीर शैवदर्शन, पृष्ठ ३७
15. शिवदृष्टिवृत्ति १/२
16. प्रागिवार्थोऽप्रकाशः स्यात् प्रकाशात्मतया विना। ईश्वरप्रत्यभिज्ञा १/५/२

17. स्वभावमवभासस्य विमर्शं विदुरन्यथा। प्रकाशोऽर्थोपरक्तोऽपि स्फटिकादिजड़ोपमः॥ ईश्वरप्रत्यभिज्ञा १/५/११

18. नमः सततं पञ्चकृत्यविधायिने। प्रत्यभिज्ञाहृदयम्

19. शिवदृष्टि भूमिका पृष्ठ १२

20. शिवदृष्टि भूमिका, पृष्ठ १२

21. स एको विश्वमेषितुं ज्ञातुं कर्तुं चोन्मुखो भवन्। शक्तिस्वभावः कथितो हृदयत्रिकोणमधुमांसलोल्लासः॥ (म. मं.)

22. सा चिदानन्दमात्रात्ममग्रेच्छाज्ञानसत्क्रियाः। हृदयं देवदेवस्य भैरवस्याविभागभूः॥ प्रपञ्चसार ५

23. प्रकाशरूपा चिच्छक्तिः। तन्त्रालोक १

24. तच्चमत्कार इच्छाशक्तिः। तन्त्रसार १

25. इच्छया सर्वभावत्वमनेकात्मत्वमेव च। तदिच्छासामानन्तर्यें तथा भूतात्मता यतः॥ शिवदृष्टि ३/३५, ३६

26. स्वेच्छातो भावरूपत्वे पराधीना कुतः स्थितिः। शिवदृष्टि ३/४२

27. परेच्छातो न जडत्वमवस्थितम्। शिवदृष्टि ३/४०

28. आमर्शात्मकता ज्ञानशक्तिः। तन्त्रसार १

29. यज्ज्ञानं तत् प्रकाशनशक्तिरूपता चिदात्मनः सर्वप्रतिपत्तृणामवेद्यमन्तःकरण इव प्रकाशमानं तत्कार्यं यतः सा ज्ञानशक्तिः। शिवदृष्टिवृत्ति १/२१

30. अस्यां हि प्रसरन्त्यां जगदुन्मिषति व्यवतिष्ठते च, निवृत्तप्रसरायां च निमिषति। प्रत्यभिज्ञाहृदयम्, पृष्ठ २१

31. काश्मीर शैविज्म, पृष्ठ ४६

32. सदाशिवतत्वे अहन्ताच्छादितास्फुटेदन्तामयम्। प्रपञ्चहृदयम् ३

33. इच्छापूर्वभागे परापरावस्थादशायां तदनुरूपं बिभर्ति ध्यायिनां ध्येयम्। कदाचिदिच्छातः=इच्छाशक्तिरूपत्वात् निमित्तात्। अथवा इच्छारूपमासाद्य तदनुरूपं पूर्ववद्रूपं बिभर्ति। कदाचित् पुनः ज्ञानशक्तिरूपत्वात् सदाशिवरूपं बिभर्ति। शिवदृष्टिवृत्ति १/३०

34. तादृगेव श्रीसदासिवभट्टारकाधिष्ठितो मन्त्रमहेश्वराख्यः प्रमातृवर्गः परमेश्वरेच्छावकल्पिततथावस्थानः। प्रपञ्चहृदयम् ३

35. कदाचिदैश्वरीं स्थितिम्। क्रियाशक्तिसमाभोगात्। शिवदृष्टि १/३०, ३१

36. ईश्वरो बहिरुन्मेषः निमेषोऽन्तः सदाशिवः। शिवदृष्टि १/३०

37. ... कदाचिदैश्वरीं स्थितिम्। क्रियाशक्तिसमायोगात्...। शिवदृष्टि १/३१

38. ईश्वरतत्त्वे स्फुटेदन्ताहन्तासामानाधिकरण्यात्मं यादृक् विश्वं ग्राहं तथाविध एव ईश्वरभट्टारकाधिष्ठितो मन्त्रेश्वरवर्गः। प्रपञ्चहृदयम् ३

39. कदाचित् स्थूलवेदनात् विद्यात्व...। शिवदृष्टि १/३१

40. विद्यापदे श्रीमदनन्तभट्टारकाधिष्ठिता बहुशाखावान्तरभेदभिन्ना यथाभूता मन्त्राः प्रमातारः। प्रपञ्चहृदयम् ३

41. मायोर्ध्वे यादृशा विज्ञानाकलाः कर्तृताशून्यशुद्धबोधात्मानः तादृगेव तदभेदसारम्। प्रपञ्चहृदयम् ३

42. बोधादिलक्षणैक्येऽपि तेषामन्योन्यभिन्नता। तथेश्वरेच्छादिभेदेन ते च विज्ञानकेवलाः॥ ईश्वरप्रत्यभिज्ञाविवृति, पृष्ठ २५७

Corresponding Author

Tej Prakash*

Research Scholar, Department of Sanskrit, Delhi University, Delhi – 110007

tejprakashjnu2016@gmail.com